दिनांक–17.02.2025

B.A.PART - III HONS. (Philosophy)

गीता का निष्काम कर्म

गीता के दूसरे अध्याय के 39वें श्लोक से निष्काम कर्मयोग का वर्णन आरम्भ होता है। गीता का मानना है कि कोई भी मनुष्य कर्म किये बगैर रह नहीं सकता। वह हर पल हर क्षण कोई न कोई कार्य अवश्य ही करता है क्योंकि कर्म करना व्यक्ति का अधिकार और कर्त्तव्य दोनों ही है। मनुष्य को अपने कर्म पर ही ध्यान देना चाहिए न कि उसके फल में विश्वास।

गीता में कर्म के प्रति अध्यता, ममता और आसक्ति को न मानने को कहा गया है, इसीलिए इस प्रकार का विचार मिलता है कि कर्म करो फल की इच्छा न करो। फल नहीं मिलने की स्थिति में अपने कर्मों को छोड़ना नहीं चाहिए।

इसका कारण यह है कि ''फलेसक्तों निबध्यते: फलासक्ति से कर्मबन्ध दृढ़ होता है। इसीलिए गीता में फल की इच्छा न रखते हुए कर्म करने की शिक्षा दी गयी है क्योंकि ''कृपणा फलहैतब'' अर्थात् फल की इच्छा रखने वाले कृपणा (दीन, दया के पात्र) होते हैं।

यहाँ यह सन्देह होता है जहाँ एक ओर गीता में कर्म करने का आदेश दिया गया है, कर्म को कर्त्तव्य व अधिकार माना गया है और दूसरी ओर फल की कामना के बिना कर्मों को करने का सन्देश दिया है। तब फल की कामना से रहित कर्मों की प्रवृत्ति कैसी होगी ?

इसके समाधान में यह कहना उचित होगा कि कामना (फल) की पूर्ति और निवृत्ति दोनों के लिए कर्मों में प्रवृत्ति हो सकती है।

गीता में स्पष्ट कहा गया है कि अज्ञानी व्यक्ति कामना की पूर्ति के लिए कर्मों में प्रवृत्त होते हैं और ज्ञानी व्यक्ति आसक्ति को त्याग कर आत्म-शुद्धि के लिए कर्म करते हैं।

इस प्रकार कर्म करने का गीता का आदेश उद्देश्य (आवश्यकता) की पूर्ति के लिए ही है, कामना पूर्ति के लिए नहीं। फल (इच्छा) की पूर्ति के लिए वही मनुष्य कर्मों में प्रवृत्त होते हैं जो अपने वास्तविक उद्देश्य को भूल गये हैं, जिनकी ओर उनका ध्यान ही नहीं होता। ऐसे ही लोगों को दीन या दया का पात्र कहा गया है। इसके विपरीत जो व्यक्ति उद्देश्य को ध्यान में रखकर फल की निवृत्ति के लिए कर्म करते हैं, उन्हें मनीषी कहा गया है।

डॉ. श्रवण कुमार मोदी
सहायक प्राध्यापक, दर्शनशास्त्र विभाग
शिवदेनी राम अयोध्या प्रसाद महाविद्यालय
बारा चकिया,पूर्वी चम्पारण
मो0–9608685335
Email Id- shrawankumarmodi1973@gmail.com